IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 25, Issue 4, Series 1 (April. 2020) 70-73
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

भारत में वर्ण व्यवस्था का शूद्रों पर प्रभाव

डा बीरेन्द्र प्रताप सिंह
अम्बिका राम देवी डिग्री कॉलेज रमना तौफीर, तहसील हरैया, जनपद बस्ती

सार
वर्ण' नवजात शिशु की वंशानुगत जड़ों को परिभाषित करता है, यह लोगों के रंग, वर्ग को इंगित करता है। वेदों के अनुसार समाज में चार प्रमुख श्रेणियां परिभाषित की गई हैं: ब्राह्मण (पुजारी, गुरु, आदि), क्षत्रिय (योद्धा, राजा, प्रशासक, आदि), वैश्य (कृषक, व्यापारी, आदि, जिन्हें वैश्य भी कहा जाता है), और शूद्र (श्रमिक)। प्रत्येक वर्ण अनुसरण करने के लिए विशिष्ट जीवन सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है; नवजात शिशुओं को अपने संबंधित वर्णों के मौलिक रीति-रिवाजों, नियमों, आचरण और मान्यताओं का पालन करना आवश्यक है।
कीवर्ड *अनुसरण, वर्ण व्यवस्था, मूल्यांकन, निर्विवाद, कर्तव्यनिष्ठ, प्रतिनिधित्व, निस्वार्थता।*

प्रस्तावना

वर्ण का पहला उल्लेख प्राचीन संस्कृत *ऋग्वेद के पुरुष सूक्तम श्लोक में मिलता है* । पुरुष आदिम सत्ता है, जो चार वर्णों के मेल से बनी है। ब्राह्मण इसका मुँह, क्षत्रिय इसकी भुजाएँ, वैश्य इसकी जाँघें और शूद्र इसके पैर हैं। इसी तरह, एक समाज का गठन भी इन चार वर्णों से होता है, जो वर्ण नियमों के पालन के माध्यम से समृद्धि और व्यवस्था बनाए रखने का प्रावधान करते हैं। किसी विशिष्ट वर्ण में नवजात शिशु को उसके जीवन सिद्धांतों का पालन करना अनिवार्य नहीं है; व्यक्तिगत हितों और व्यक्तिगत झुकावों पर समान गंभीरता से ध्यान दिया जाता है, ताकि व्यक्तिगत पसंद और प्रथागत नियमों के बीच संघर्ष को खत्म किया जा सके। इस स्वतंत्रता को देखते हुए, एक विचलित विकल्प का मूल्यांकन हमेशा दूसरों पर इसके व्यापक प्रभाव के लिए किया जाता है। प्रत्येक वर्ण के नागरिक के अधिकार हमेशा उनकी व्यक्तिगत जिम्मेदारियों के बराबर होते हैं। अंतर्दृष्टि और तर्क के साथ एक विस्तृत वर्ण व्यवस्था पाई जाती है*मनु स्मृति* (वैदिक काल का एक प्राचीन कानूनी पाठ), और बाद में विभिन्न *धर्म शास्त्रों* में । वर्ण, सिद्धांत रूप में, वंश नहीं हैं, जिन्हें शुद्ध और निर्विवाद माना जाता है, बल्कि श्रेणियां हैं, इस प्रकार जन्म के बजाय वर्ण का निर्धारण करने में आचरण की प्राथमिकता का अनुमान लगाया जाता है।

भारत में वर्ण व्यवस्था का शूद्रों पर प्रभाव

अंतिम वर्ण एक समृद्ध अर्थव्यवस्था की रीढ़ का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें उनके लिए निर्धारित जीवन कर्तव्यों के प्रति कर्तव्यनिष्ठ आचरण के लिए उनका सम्मान किया जाता है। शूद्रों पर विद्वानों के विचार सबसे विविध हैं क्योंकि उनके आचरण पर अधिक प्रतिबंध प्रतीत होते हैं। हालाँकि, *अथर्ववेद शूद्रों को वेदों* को सुनने और याद करने की अनुमति देता है , और ***महाभारत*** भी शूद्रों को *आश्रमों* में शामिल करने और उन्हें सीखने का समर्थन करता है। राजाओं द्वारा आयोजित यज्ञों में स्थानापन्न पुजारी बनना काफी हद तक प्रतिबंधित था। शूद्र द्विज नहीं हैं, इसलिए उन्हें अन्य वर्णों की तरह पवित्र धागा पहनने की आवश्यकता नहीं है। एक शूद्र पुरुष को केवल शूद्र महिला से विवाह करने की अनुमति थी, लेकिन एक शूद्र महिला को चार वर्णों

में से किसी एक से विवाह करने की अनुमति थी। *शूद्र अपने आश्रमों* में ब्राह्मणों की , अपने महलों और रियासतों के शिविरों में क्षत्रियों की, और अपनी व्यावसायिक गतिविधियों में वैश्यों की सेवा करते थे। यद्यपि वे आदिम सत्ता के पैर हैं, उच्च वर्णों के विद्वान नागरिक उन्हें हमेशा समाज का एक महत्वपूर्ण वर्ग मानते हैं, क्योंकि यदि पैर कमजोर होंगे तो एक व्यवस्थित समाज आसानी से समझौता कर लेगा। दूसरी ओर, शूद्र अपने स्वामी के आदेशों का पालन करते थे, क्योंकि उन्हें *मोक्ष प्राप्त करने का ज्ञान थाउ*नके निर्धारित कर्तव्यों को अपनाकर उन्हें वफादार बने रहने के लिए प्रोत्साहित किया। शूद्र महिलाएँ भी रानी की परिचारिका और घनिष्ठ सहचरी के रूप में काम करती थीं और विवाह के बाद उनके साथ दूसरे राज्यों में जाती थीं। कई शूद्रों को कृषक, व्यापारी बनने और वैश्यों के व्यवसायों में प्रवेश करने की भी अनुमति दी गई। हालाँकि, बिगड़ती आर्थिक स्थितियों को देखते हुए, जीवन कर्तव्यों के ये मोड़ विशेष परिस्थितियों में होंगे। शूद्रों की निस्वार्थता उन्हें अभूतपूर्व आदर और आदर का पात्र बनाती है।

साहित्य समीक्षा

मनु ने कहा है कि यदि कोई वैश्य और शूद्र , किसी ब्राह्मण के घर मेहमान बनकर आये तो उन्हे कृपापूर्वक नौकरो के साथ भोजन करने कि अनुमति दी जानी चाहिए । मनु का नियम है कि स्नातक को शूद्र का अन्न नहीं खाना चाहिए । यह भी कहा गया है कि राजा का अन्न खाने से स्नातक का तेज नष्ट होता है , शूद्र का अन्न खाने से विद्या का , वैश्य का अन्न खाने से आयु का और चर्मकार का अन्न खाने से उसके यश का ह्रास होता है । ब्राह्मणों को अपनी पवित्रता और श्रेष्ठता को बचाए रखने के लिए उन्हें अन्य वर्णों से खान - पान का सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए । यदि वह उनसे खान - पान का सम्बन्ध रखतें है , तो इससे उनका तेज और प्रभाव नष्ट हो जाता है । मनु ने प्रथम चार प्रकार के विवाह अर्थात् ब्रह्म , दैव , आर्ष और प्रजापत्य विवाह ब्राह्मण के लिए निर्धारित किया है । राक्षस विवाह क्षत्रियों के लिए और आसुर विवाह वैश्य और शूद्र के लिए विहित किया है । उन्होंने यह भी बताया है कि ब्राह्मण आसुर और गंधर्व विवाह को भी अपना सकते है , क्षत्रिय भी आसुर गंधर्व और पैशाच विवाह अपना सकते है और यही पद्धतियों वैश्व और शूद्र के लिए भी हो सकती है । इस के प्रकार क्षत्रिय के लिए राक्षस पद्धति से नियम बनाकर उन्हें केवल वैश्य या शूद्र से अलग किया गया है । मनु ने स्त्री धन सम्बन्धी नियम बनाये है , उनके अनुसार आसुर राक्षस और पैशाच पद्धति से विवाहिता स्त्री निःसंतान मर जाए तो स्त्री धन उसके माँ बाप को अर्थात् उसके माता - पिता के परिवार मिलेगा , न कि उसके पति के परिवार को मिलेगा । इससे यह पता चलता है कि वैश्य और शूद्र द्वारा अपनाई गई वैवाहिक पद्धतियों में मातृसत्तात्मक व्यवस्था थी । इसके साथ ही मनु ने शूद्रों के लिए नियोग और विधवा विवाह का समर्थन किया है और अन्य तीनो उच्च वर्णों के लिए इस संबंध में घोर निन्दा की है । इस प्रकार हम कह सकते है कि मनु द्वारा बनाए गये नियम शूद्र महिलाओं के लिए संतोषजनक थे और वे परिवार / पति पर निर्भर न रहकर आत्मनिर्भर थी । वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने में शूद्रों की स्थिति संतोषजनक थी । शूद्र आसूर , गंधर्व या पैशाच विवाह कर सकते थे , जबकि ब्राह्मण ब्रह्म , दैव , आर्ष एवं प्रजापत्य विवाह कर सकते है । इस काल में शूद्र महिला की स्थिति अन्य वर्णों की महिलाओं से अच्छी मानी जा सकती है । शूद्र समाज में मातृसत्तात्मक परिवार थे । शूद्र महिला नियोग या विधवा कर सकती थी और वह आत्मनिर्भर थी ।

ऋग्वेद के अनुसार केवल तीन वर्णों का ही उल्लेख है , परन्तु पुरूष सूक्त में चौथे वर्ण के रूप में शूद्र का उल्लेख है । शूद्र की उत्पति ब्रह्म के चरणों से मानी गई है । ऐसी मान्यता उस समय प्रचलित थी कि जैसे गंगा भारतीय समाज की सेवा करने वाली तथा सबको पवित्र करने वाली है ऐसी ही स्थिति शूद्र वर्ण की थी , परन्तु महाभारत काल में शूद्र वर्ण की स्थिति बदल गई । शूद्र वर्ण का व्यक्ति योग्य होने पर भी राजकुमारों के साथ युद्ध नहीं कर सकता था । कर्ण का पालन पोषण सूत वंश में होने के कारण उसे रंगभूमि से युद्ध करने

से रोक दिया गया था । राजसूय यज्ञ में भी शूद्रों को वेदी के पास जाने की मनाही थी । उनके लिए वेदों का अध्ययन निषेध था तथा वे वेद की ऋचाएं भी नहीं सुन सकते थे । उनका कर्त्तव्य केवल तीनों वर्गों की सेवा करना था ।

स्टेफ़नी जैमिसन और जोएल ब्रेरेटन के अनुसार , "ऋग्वेद में एक विस्तृत, बहुत-विभाजित और व्यापक जाति व्यवस्था के लिए कोई सबूत नहीं है", और "वर्ण प्रणाली ऋग्वेद में भ्रूण रूप में प्रतीत होती है और, तब और बाद में, एक सामाजिक सामाजिक वास्तविकता के बजाय आदर्श"।

इतिहासकार आरएस शर्मा कहते हैं कि "ऋग्वैदिक समाज न तो श्रम के सामाजिक विभाजन के आधार पर संगठित था और न ही धन में अंतर के आधार पर मुख्य रूप से रिश्तेदारों, जनजाति और वंश के आधार पर संगठित था। "

शर्मा के अनुसार, *ऋग्वेद* या *अथर्ववेद* में कहीं भी "दास और आर्यों के बीच, या शूद्र और उच्च वर्णों के बीच भोजन और विवाह के संबंध में प्रतिबंध का कोई सबूत नहीं है"। इसके अलावा, अथर्ववेद के उत्तरार्ध में शर्मा कहते हैं, "शूद्र ध्यान में नहीं आता, शायद इसलिए कि उसका वर्ण उस स्तर पर मौजूद नहीं था"।

रोमिला थापर के अनुसार , वैदिक पाठ में शूद्र और अन्य वर्णों के उल्लेख को इसके मूल के रूप में देखा गया है, और "समाज के वर्ण क्रम में, शुद्धता और प्रदूषण की धारणाएं केंद्रीय थीं और इस संदर्भ में गतिविधियों पर काम किया गया था" और यह है "सूत्रबद्ध और व्यवस्थित, समाज को एक पदानुक्रम में व्यवस्थित चार समूहों में विभाजित करना"।

शर्मा के अनुसार, शूद्र वर्ग की उत्पत्ति इंडो-आर्यन और गैर-इंडो-आर्यन से हुई थी, जिन्हें "आंशिक रूप से बाहरी और आंशिक रूप से आंतरिक संघर्षों के कारण" उस स्थिति में धकेल दिया गया था।

याज्ञवल्क्य स्मृति और गृह्यसूत्र प्रारंभिक भारतीय धर्मों पर विशेषज्ञता रखने वाले धर्म के प्रोफेसर लॉरी पैटन के अनुसार , शूद्र के अधिकार और स्थिति प्रारंभिक भारतीय ग्रंथों में व्यापक रूप से भिन्न हैं ।आपस्तंब गृह्यसूत्र शूद्र छात्रों को वेद सुनने या सीखने से बाहर रखता है । इसके विपरीत याज्ञवल्क्य स्मृति में शूद्र छात्रों का उल्लेख है , और महाभारत में कहा गया है कि शूद्र सहित सभी चार वर्ण वेद सुन सकते हैं ।

हिंदू ग्रंथ कहते हैं कि तीन वर्ण ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य - शूद्र शिक्षकों से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं , और यज्ञ बलिदान शूद्रों द्वारा किए जा सकते हैं । शूद्रों के लिए ये अधिकार और सामाजिक गतिशीलता कम सामाजिक तनाव और अधिक आर्थिक समृद्धि के समय में उत्पन्न हुई होगी , ऐसे समय में महिलाओं की सामाजिक स्थितियों में भी सुधार देखा गया था ।

मध्यकालीन उपनिषद वज्रसुचि उपनिषद जैसे मध्यकालीन युग के ग्रंथों में वर्ण की चर्चा की गई है और इसमें शूद्र शब्द भी शामिल है ।

विल्फ्रिड लॉरियर विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर अश्वनी पीतुश के अनुसार , वज्रसुची उपनिषद एक महत्वपूर्ण पाठ है क्योंकि यह मानता है और दावा करता है कि किसी भी सामाजिक पृष्ठभूमि का कोई भी इंसान अस्तित्व की उच्चतम आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त कर सकता है ।

निष्कर्ष

भारतीय वर्ण प्रधान समाज में हिंदू, जो जाति व्यवस्था की असमानताओं के प्रति आजजागरूक हैं, फिर भी चार- *वर्ण* व्यवस्था को अच्छे समाज के लिए मौलिक मानते हैं, अक्सर जातियों में सुधार करके इस स्पष्ट *वर्ण व्यवस्था की वापसी की वकालत करते हैं। बदले में, व्यक्तिगत जातियों ने एक विशेष वर्ण* के साथ पहचान करके और उसके पद और सम्मान के विशेषाधिकारों की मांग करके अपनी सामाजिक स्तर बना रही हूं बनाने बढ़ाने का प्रयास है। भारत में हिंदू जीवन शैली को पारंपरिक रूप से *वर्णाश्रम धर्म (किसी के वर्ण* के लिए जीवन के चरणों के कर्तव्य) कहा जाता है। वर्ण व्यवस्था *जातियों* की व्यवस्था को समझने के लिए प्रासंगिक बनी हुई है।

ग्रन्थसूची

1. बाशम, आर्थर लेवेलिन (1989)। *शास्त्रीय हिंदू धर्म की उत्पत्ति और विकास* (पुनर्मुद्रित संस्करण)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस । आईएसबीएन 978-0-19-507349-2.
2. डीआर भंडारकर (1989)। *प्राचीन भारतीय संस्कृति के कुछ पहलू* । एशियाई शैक्षिक सेवाएँ। आईएसबीएन 978-81-206-0457-5.
3. जोहान्स ब्रोंखोर्स्ट (2011)। *ब्राह्मणवाद की छाया में बौद्ध धर्म* । ब्रिल अकादमिक। आईएसबीएन 978-90-04-20140-8.
4. ईटन, रिचर्ड (2008)। *दक्कन का एक सामाजिक इतिहास, 1300-1761* । कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. आईएसबीएन 978-0-521-51442-2.
5. फ्लड, गेविन डी. (1996), *एन इंट्रोडक्शन टू हिंदुइज्म* , कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, आईएसबीएन 978-0521438780
6. रोजर बोशे (2013), *द फर्स्ट ग्रेट पॉलिटिकल रियलिस्ट: कौटिल्य एंड हिज़ अर्थशास्त्र* , लेक्सिंगटन, आईएसबीएन 978-0739104019
7. वरदराज वी. रमन (2006)। "हिन्दू धर्म"। एलिजाबेथ एम. डाउलिंग और डब्ल्यू. जॉर्ज स्कारलेट (सं.) में। *धार्मिक और आध्यात्मिक विकास का विश्वकोश* । सेज प्रकाशन। डीओआई : 10.4135/9781412952477.n114 । आईएसबीएन 978-0761928836.
8. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2010)। "शूद्र: हिंदू वर्ग" । एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के संपादक।
9. घुर्ये, जीएस (1969) [पहली बार 1932 में प्रकाशित], *कास्ट एंड रेस इन इंडिया* (पांचवां संस्करण), पॉपुलर प्रकाशन, आईएसबीएन 978-81-7154-205-5
10. स्टेफ़नी जैमिसन; जोएल ब्रेरेटन (2014)। *ऋग्वेद: भारत का सबसे प्रारंभिक धार्मिक काव्य* । ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। आईएसबीएन 978-0-19-937018-4.
11. नोवेट्ज़के, क्रिश्चियन ली (2013)। *धर्म और सार्वजनिक स्मृति: भारत में संत नामदेव का सांस्कृतिक इतिहास* । कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस. आईएसबीएन 978-0-23151-256-5.
12. पैट्रिक ओलिवेल (2005)। *मनु की विधि संहिता* . ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। आईएसबीएन 978-0195171464.
13. ऑर, लेस्ली (2000)। *मध्यकालीन तमिलनाडु में भगवान मंदिर की दाता, भक्त और स्त्रियाँ* । ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। आईएसबीएन 978-0-19-509962-1.
14. लॉरी पैटन (2002)। *अधिकार के आभूषण: हिंदू भारत में महिलाएं और पाठ्य परंपरा* । ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। आईएसबीएन 978-0-19-513478-0.
15. एलएन रंगराजन (1992)। *अर्थशास्त्र* . पेंगुइन क्लासिक्स। आईएसबीएन 978-0140446036.